एस. रथिनम उर्फ कुप्पामुथु एवं अन्य

बनाम

एल. एस. मारियाप्पन और अन्य

18 मई, 2007

[एस.बी. सिन्हा और मार्कंडेय काटजू, जेजे.]

वसीयतः-

पारिवारिक निजी मंदिर-प्रबंधन और/या शेबटशिप का अधिकार- उत्तराधिकार वसीयतनामा- जो एक निजी पारिवारिक मंदिर की विषय-वस्तु के रूप में ज्ञात है। 'पेचीअम्मन मंदिर' की स्थापना एक 'पीसी' द्वारा की गई थी, जिनके दो बेटे थे, एलपी और 'एस'- 'एस' के बेटे 'टी' ने एक वाद दायर किया जिसे डिक्री किया गया और उक्त डिक्री को अंतिम रूप दिया गया, जिसके अनुसार 'एस' की शाखा दो साल की अवधि के लिए प्रबंधन की अवधि के अधिकार की हकदार हो गई। इसके बाद 'एलपी' और उनके दो बेटों ने वाद के मंदिर और उसकी सम्पत्तियों को शामिल करते हुए उसके प्रबंधन की शर्तों सहित अपनी संपत्तियों के विभाजन के लिए एक विभाजन विलेख बनाया- यह सहमति हुई कि 'एलपी' स्वयं 'पुजारी' के साथ-साथ ट्रस्टी के पद पर दो साल के लिए रहेंगे, जबकि उनके दोनों बेटे आठ-आठ महीने की अवधि के लिए इस पद पर रहेंगे- 'एलपी' ने अपने बेटे 'सी' के पक्ष में अपना हिस्सा वसीयत किया- 'एलपी' की मृत्यु के बाद, 'सी' सोलह महीने की अवधि के लिए 'पुजारी' के साथ-साथ एक ट्रस्टी के रूप में कार्य कर रहा था और 'एस' और उसके बेटों ने आठ महीने की अवधि के लिए उक्त संपत्तियों का प्रबंधन किया- प्रतिवादी सं. 1 को अपने उत्तराधिकारी और कानूनी प्रतिनिधि के रूप में छोड़कर 'सी' की मृत्यु हो गई- 'एस' ने अपने बेटों के पक्ष में एक वसीयत भी निष्पादित कर दी- इस संबंध में एक योजना तैयार करने के लिए उक्त

संपत्तियों के लिए वादी द्वारा 'टी' और अन्य के खिलाफ एक वाद दायर किया गया, जिसे खारिज कर दिया गया- इसके खिलाफ एक अपील दायर की गई- हालांकि, 'सी' की मृत्यु के बाद, 'एस' के बेटों ने वाद दायर किया, इस वाद में अन्य बातों के साथ-साथ, यह घोषणा करने के लिए प्रार्थना की गई कि प्रतिवादी सं. 1 'सी' का कानूनी उत्तराधिकारी नहीं था- इसमें 'एलपी' द्वारा निष्पादित वसीयत की वैधता पर भी सवाल उठाया गया- विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी सं. 1 को 'सी' का बेटा मानते हुए 'एलपी' द्वारा निष्पादित वसीयत की वैधता को भी यथावत रखा- विचारण न्यायालय के उक्त फैसले के खिलाफ एक अपील दायर की गई- दोनों अपीलों को उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा एक साथ सुना गया, जिन्होंने फैसला सुनाया वसीयत कानून में मान्य नहीं होने के कारण, उक्त संपत्तियों के प्रबंधन के संबंध में एक योजना तैयार करने का निर्देश दिया गया- इसी योजना तैयार करने के निर्देश से व्यथित होकर प्रतिवादी सं. 1 द्वारा लेटर्स पेटेंट अपील दायर की गई थी- उसने लेटर्स पेटेंट अपील दायर करते हुए एकल न्यायाधीश के निष्कर्ष के उस हिस्से के खिलाफ कि 'एलपी' द्वारा निष्पादित वसीयत कानून में वैध नहीं थी, प्रतिवादी संख्या 4 ने भी योजना के निर्धारण पर सवाल उठाते हुए एक लेटर्स पेटेंट अपील दायर की-वादी ने भी इस निर्णय पर कि प्रतिवादी नंबर 1 'सी' का बेटा था, इसके खिलाफ एक प्रति-आपत्ति दायर की। अपील और प्रति-आपत्ति की सुनवाई एक साथ की गई- खंडपीठ के समक्ष यह स्वीकार किया गया कि एकल न्यायाधीश के फैसले के अनुसार बनाई गई योजना संतोषजनक ढंग से काम कर रही थी और इसमें कोई हस्तक्षेप नहीं किया गया- एकल न्यायाधीश का यह निष्कर्ष कि प्रतिवादी सं. 1 'सी' का पुत्र था, भी गंभीरता से विवादित नहीं था- वसीयत की वैधता के संबंध में, हालांकि, खंडपीठ ने इसे वैध माना- परिणामस्वरूप, यह निर्धारित किया गया कि प्रतिवादी सं. 1 'एलपी' शाखा को आवंटित वाद मंदिर और उसकी संपत्तियों का 24 महीनों के भीतर कुल सोलह महीने की अवधि के लिए प्रबंधन

करने का अधिकारी था- शुद्धता की- अभिर्निधारित- प्रश्नगत ट्रस्ट एक निजी ट्रस्ट है- एक निजी ट्रस्ट के रूप में मंदिर के प्रबंधन के नियम और शर्तें ट्रस्ट के संस्थापक की इच्छा के अधीन होंगी- इस संबंध में कोई लिखित दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया- एक वसीयतनामा दस्तावेज इच्छा को दर्शाता है- इसका मतलब अपनी संपत्ति के संबंध में वसीयतकर्ता के आशय की कानूनी घोषणा है- यह अंतरण नहीं है बल्कि अंतरण का एक तरीका है- एक वसीयत अंतरण नहीं है, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 6 (डी) में निहित रोक यहां लागू नहीं होगी- इसलिए, 'शेबेटशिप' एक विरासत योग्य अधिकार है और इसे अंतरित किया जा सकता है।

एक निजी पारिवारिक मंदिर जिसे 'पेचीअम्मन मंदिर' के नाम से जाना जाता है, की स्थापना एक पीसी ने की थी जिनके दो बेटे थे, 'एलपी' और 'एस'। 'एस' के बेटे 'टी' ने एक वाद दायर किया जिस पर फैसला सुनाया गया और उक्त डिक्री को अंतिम रूप दिया गया, जिसके अनुसार 'एस' की शाखा दो साल की अवधि के लिए प्रबंधन की अवधि के अधिकार की हकदार बन गई। इसके बाद 'एलपी' और उनके दो बेटों ने वाद मंदिर और इसकी संपत्तियों के प्रबंधन की शर्तों सहित अपनी संपत्तियों के विभाजन के लिए एक विभाजन विलेख में तैयार किया। इस बात पर सहमति हुई कि 'एलपी' स्वयं दो साल के लिए 'पुजारी' के साथ-साथ ट्रस्टी के पद पर रहेंगे, जबकि उनके दोनों बेटे आठ-आठ महीने की अवधि के लिए इस पद पर रहेंगे।

'एलपी' ने अपने बेटे 'सी' के पक्ष में अपना हिस्सा वसीयत करते हुए एक वसीयत निष्पादित की। 'एलपी' की मृत्यु के बाद, 'सी' सोलह महीने की अवधि के लिए 'पुजारी' के साथ-साथ एक ट्रस्टी के रूप में कार्य कर रहा था और 'एस' और उसके बेटे आठ महीने की अवधि के लिए उक्त संपत्तियों का प्रबंधन कर रहे थे। 'सी' की मृत्यु हो गई, और प्रतिवादी सं. 1 को उसके उत्तराधिकारी और कानूनी प्रतिनिधि के रूप में छोड़ दिया गया। 'एस' ने भी अपने बेटों के पक्ष में वसीयत कर दी।

उक्त संपत्तियों के संबंध में एक योजना तैयार करने के लिए अपीलकर्ताओं द्वारा 'टी' और अन्य के खिलाफ वाद दायर किया गया था, जिसे खारिज कर दिया गया था। इसके विरुद्ध वहां अपील दायर की गई।

हालाँकि, 'सी' की मृत्यु के बाद, 'एस' के बेटों ने एक वाद दायर किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह घोषणा करने की प्रार्थना की गई कि प्रतिवादी नंबर 1 'सी' का कानूनी उत्तराधिकारी नहीं था। 'एलपी' द्वारा निष्पादित वसीयत की वैधता पर भी सवाल उठाया गया। विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी सं. 1 को 'सी' का बेटा मानते हुए, 'एलपी' द्वारा निष्पादित वसीयत की वैधता को भी बरकरार रखा। विचारण न्यायालय के उक्त फैसले के खिलाफ अपील दायर की गई।

दोनों अपीलों पर उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने एक साथ सुनवाई की, जिन्होंने वसीयत को कानून में वैध नहीं मानते हुए, उक्त संपत्तियों के प्रबंधन के संबंध में एक योजना तैयार करने का निर्देश दिया।

इस योजना तैयार करने के निर्देश से व्यथित प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा एक लेटर्स पेटेंट अपील दायर की गई। उसने एकल न्यायाधीश के उस फैसले के उस हिस्से के खिलाफ भी लेटर्स पेटेंट अपील दायर की, कि 'एलपी' द्वारा निष्पादित वसीयत कानून में वैध नहीं थी। प्रतिवादी संख्या 4 ने भी योजना की रूपरेखा पर सवाल उठाते हुए एक लेटर्स पेटेंट अपील दायर की। अपीलकर्ताओं ने इस निर्णय के विरुद्ध कि प्रतिवादी संख्या 1 'सी' का बेटा था, एक प्रति-आपत्ति दायर की। अपील और प्रति-आपत्ति की सुनवाई एक साथ की गई।

खंडपीठ के समक्ष यह स्वीकार किया गया कि एकल न्यायाधीश के निर्णय के अनुसरण में योजना बनायी गयी है जो संतोषजनक ढंग से कार्य कर रही थी तथा इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी। एकल न्यायाधीश का निष्कर्ष यह है कि

प्रतिवादी संख्या 1 'सी' का पुत्र था, इस पर भी गंभीर विवाद नहीं था। इस संबंध में हालाँकि, वसीयत की वैधता को खंडपीठ ने उसी प्रकार वैध माना। परिणामस्वरूप, यह निर्धारित किया गया कि प्रतिवादी सं. 1 'एलपी' शाखा को आवंटित वाद मंदिर और उसकी संपत्तियों का 24 महीनों के भीतर कुल सोलह महीने की अवधि के लिए प्रबंधन करने का अधिकारी था।

न्यायालय के समक्ष निम्नलिखित प्रश्न उठाः-

क्या किसी मंदिर और/या 'शेबेटशिप' का प्रबंधन करने का अधिकार वसीयती उत्तराधिकार की विषय-वस्तु हो सकता है?

कोर्ट ने अपील खारिज करते हुए अभिर्निधारित कियाः

1. विचाराधीन ट्रस्ट एक निजी ट्रस्ट है। इसलिए, एक निजी ट्रस्ट के रूप में, मंदिर के प्रबंधन के नियम और शर्तें ट्रस्ट के संस्थापक की इच्छा के अधीन होंगी। इस संबंध मे कोई लिखित दस्तावेज नहीं था हालाँकि, पक्षकारों ने ट्रस्ट के संस्थापक की इच्छा को इस आशय से समझा कि 'पुजारीशिप' के पद के साथ-साथ एक अवधि के लिए ट्रस्टीशिप का पद भी कानून में मान्य होगा। वाद में इसे निर्धारित किया गया। [पैरा 15][576-एफ-जी]

संदर्भित- काकीनाडा अन्नदान समाजम बनाम हिंदू धार्मिक और धर्मार्थ बंदोबस्ती आयुक्त (1970), 3 एससीसी 359 और अंगुरबाला मुल्लिक बनाम देबब्रत मुल्लिक [1951] एससीआर 125

2. यह तथ्य कि दोनों शाखाएं दो-दो साल की प्रबंधन अवधि पर सहमत हुई थीं और उक्त वाद में पारित डिक्री को प्रभावी किया था, यह इस ओर एक इशारा है। इसके अलावा, 'एलपी' और उनके दो बेटों ने भी बंटवारे का एक विलेख निष्पादित किया। विभाजन के उक्त विलेख के पक्षकारों द्वारा इस बात पर सहमति व्यक्त की गई थी

कि उनमें से प्रत्येक आठ महीने की अवधि के लिए 'पुजारीशिप' और ट्रस्टीशिप का पद संभालेंगे। [पैरा 16] [576-जी-एच, 577-ए]

3. वाद में वादी ने इस आधार पर अनुतोष का दावा यह तर्क देते हुए किया कि प्रतिवादी सं. 1 उसका बेटा नहीं था 'सी' की मृत्यु पर उसका अधिकार प्रत्यावर्तक के रूप में निहित हो गया है। एक बार 'पुजारीशिप' के कार्यालय में एक विशेष अवधि के लिए अर्थात दो साल की अवधि में सोलह महीने के लिए प्रत्यावर्तन के अधिकार का दावा किया जाता है तो 'सी' में अधिकार के अस्तित्व पर विवाद नहीं किया जा सकता। विधि में इसे स्वीकार किया हुआ माना जाएगा। जब तक पक्षकारों द्वारा की गई व्यवस्थाएं और/या 'एलपी' द्वारा निष्पादित वसीयत के आधार पर संपत्तियों का अंतरण 'सार्वजनिक नीति' के विपरीत नहीं पाया जाता है तब तक ऐसा नहीं होता है, जैसा कि संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 23 के तहत परिकल्पित है। इसे लागू करने में कोई विधिक बाधा मौजूद नहीं है, खासकर तब जब यह ट्रस्ट के संस्थापक की इस संबंध में इच्छा पर निर्भर होगा। [पैरा 18] [577-बी-डी]

4. वसीयतनामा दस्तावेज एक इच्छा को दर्शाता है। इसका अर्थ है वसीयतकर्ता अपनी संपत्ति के संबंध में आशय की कानूनी घोषणा जिसे वह अपनी मृत्यु के बाद लागू करना चाहता है। यह अपने स्वभाव में जारी रहने वाली और उसके जीवन के दौरान प्रतिसंहरणीय है। [पैरा 19] [577-ई]

उमा देवी नांबियार बनाम. टी.सी. सिधान, एआईआर (2004) एससी 172, संदर्भित।

5. एक वसीयतकर्ता अपनी वसीयत से अपनी संपत्ति का कैसा भी निस्तारण इस शर्त के अधीन कर सकता है कि वह कानूनों के साथ असंगत या राज्य की नीति के विपरीत नहीं होना चाहिए। किसी व्यक्ति की इच्छा के आशय का समुच्चय

वसीयतनामा है, जहां तक वे लिखित रूप में प्रकट होते हैं। यह अंतरण नहीं बल्कि अंतरण का एक तरीका है। [पैरा 21] [578-ई]

बेरू राम बनाम शंकर दास, एआईआर (1999) जे और के 55, स्वीकृत।

6. यह जीवित व्यक्तियों के मध्य होने के नाते नामांकन की भी अनुमति है। एक वसीयत अंतरण नही है। संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 6 (डी) में निहित रोक यहां प्रायोज्य नहीं है। उच्च न्यायालय की खंडपीठ का यह निष्कर्ष कि वसीयत कानून में वैध है, सही है। [पैरा 34] [582-एफ-जी]

अंगुरबाला मुल्लिक बनाम देबब्रत मुल्लिक [1951] एससीआर 125, नारायणम सेशाचार्युलु बनाम नारायणम वेंकटाचार्युलु, एआईआर (1957) एपी 876, शंभू चरण शुक्ला बनाम श्री ठाकुर लाडली राधा चंद्र मदन गोपालजी महाराज, [1985] 2 एससीसी 524, रणबीर दास बनाम कल्याण दास [1997] 4 एससीसी 102, काकीनाडा अन्नदाना समाजम बनाम हिंदू धार्मिक और धर्मार्थ बंदोबस्ती आयुक्त, [1970] 3 एससीसी 359, काली किंकर गांगुली बनाम पन्ना बनर्जी [1974] 2 एससीसी 563, राजेश्वर बनाम गोपेश्वर, (1908) 35 सीएएल. 226, सोवाबती दासी बनाम काशी नाथ, एआईआर (1972) सीएएल. 95, मनचरम बनाम प्राणशंकर, (1882) 6 बॉम्बे 298, श्याम सुंदर बनाम मोनी मोहन, एआईआर (1976) एससी 977 और नन्दलाल बनाम केशरलाल, एआईआर (1975) राज 226, को संदर्भित किया गया।

डा. बी. के. मुखर्जीः "धार्मिक और धर्मार्थ ट्रस्ट का हिंदू कानून, प्रथम संस्करण पी. 228 को संदर्भित किया गया।

7. इसके अलावा, मंदिर संचालन के उद्देश्य से प्रबंधन की एक निश्चित अवधि की आवश्यकता को परिवार द्वारा लंबे समय से स्वीकार किया गया है। यदि इसे अन्यथा निर्धारित किया जाता है तो सक्षम न्यायालय द्वारा पारित बाध्यकारी डिक्री

हतोत्साहित करना होगा जो पक्षकारों पर बाध्यकारी है और जो कि 1944 को प्रतिपादित की गई थी। यह इस उद्देश्य के लिए है कि यहां अपीलकर्ता का आचरण प्रासंगिक हो जाता है। उन्होंने न केवल शाखा 'एस' का अधिकार स्वीकार किया बल्कि 'सी' का अधिकार भी स्वीकार किया। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि 'सी' लंबे समय से दो साल की अवधि में सोलह महीने की अवधि के लिए 'शेबेटशिप' के अधिकार का प्रयोग कर रहा था। एक बार जब अधीनस्थ न्यायालयों का यह निष्कर्ष आ गया कि प्रतिवादी संख्या 1 उसका बेटा था तो उसके उत्तराधिकार का अधिकार विवादित नहीं है, इसलिए इस अपील में उठाए गए तर्कों को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। [पैरा 35] [582-एच; 583-ए-बी]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील संख्या 6616/2002

उच्च न्यायालय, मद्रास के एल.पी.ए. 1991 की संख्या 62 में अंतिम निर्णय और आदेश दिनांकित 09.08.2000 से।

वी. प्रभाकर, रामजी प्रसाद, वी. सुब्रमणि और रेवती राघवन अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित।

के. के. मणी, के. बी. संदीप, एस. बालाजी और एस. श्रीनिवासन प्रतिवादीगण की ओर से उपस्थित।

न्यायालय का निर्णय **एस.बी. सिन्हा, जे.** द्वारा दिया गयाः-

1. इस अपील में प्रश्न यह है कि क्या किसी मंदिर और/या शेबेटशिप का प्रबंधन करने का अधिकार वसीयतनामा उत्तराधिकार का विषय हो सकता है। यह प्रश्न 1991 के एलपीए नंबर 62 उच्च न्यायालय की एक डिवीजन बेंच द्वारा पारित दिनांक 09.08.2000 के फैसले और डिक्री से उत्पन्न होता है, जो 1979 के एएस नंबर 661 में इसी न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित 28.01.1991 के

फैसले और डिक्री की पुष्टि करता है।

2. एक निजी पारिवारिक मंदिर जिसे 'पेचैम्मन मंदिर' के नाम से जाना जाता है, की स्थापना पलानीचामी चेट्टियार ने की थी। उक्त पलानीचामी चेट्टियार की वंशावली तालिका इस प्रकार हैः

पलानीचामी चेट्टियार

↓

एल.पी. लक्ष्मणन चेट्टियार — शनमुगम उर्फ पलानीचामी चेट्टियार

शनमुगम उर्फ पलानीचामी चेट्टियार (मृत) — चेल्लम उर्फ सुब्बैया — थंगम उर्फ पलानीचामी चेट्टियार — रामलिंगम

एल.एस मरियप्पन

रथिनम उर्फ लक्ष्मणन — चेल्लम उर्फ सुब्बैया — पचेमुथु — शनमुघम — कुप्पुमुथु (मृत) पलानीसामी

3. ट्रस्ट के संस्थापक ने मंदिर के रखरखाव और पूजा-अर्चना के लिए संपत्ति समर्पित की, जिसमें सामने चार दुकान कक्ष और मंदिर के पीछे कुछ आवासीय भवन शामिल हैं। परिवार की दो शाखाओं के बीच विवाद और मतभेद उत्पन्न होने पर शनमुगम के पुत्र थंगम ने एक मुकदमा दायर किया, जिसे 1943 के ओ.एस. नंबर 9 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त मुकदमे का फैसला सुनाया गया था, जिसका प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः

"खंड (iii): किसी अनुसूचि संपत्तियों का प्रबंध एक ओर वादी और दूसरे प्रतिवादी तथा दूसरी ओर प्रतिवादी सं.1 और 3 से 9 के बीच बारी-बारी से किया जाएगा, प्रत्येक शाखा दो साल की अवधि के लिए प्रबंध करेगी।

खंड (iv): कि उक्त दो शाखाओं के पास, पहले प्रतिवादी के जवाब दावा (यहां निर्दिष्ट) के पृष्ठ 13 पर आईटम 1 से 6 के रूप में उल्लिखित मंदिर के आभूषणों के प्रबंधन का भी अधिकार इस अवधि के दौरान होगा। 1944 का आई.ए. नंबर 375 दिनांक 15.04.1944 आदेश के अनुसार संशोधित जवाबदावा के एक ही पृष्ठ में कालियास के साथ कांस्य सूदम, थट्टू का उल्लेख किया गया है।"

4. उक्त अंतिम डिक्री के अनुसार शनमुगम की शाखा दो साल की अवधि के लिए प्रबंधन के अधिकार की हकदार बन गई है। हालाँकि, 04.07.1956 को या उसके आसपास, एल.पी. लक्ष्मणन चेट्टियार और उनके दो बेटों ने अपनी संपत्तियों के विभाजन के लिए एक विभाजन विलेख तैयार किया, जिसमें सूट मंदिर और उसकी संपत्तियों के प्रबंधन की शर्तें भी शामिल थीं। इस बात पर सहमति हुई कि लक्ष्मणन चेट्टियार स्वयं पुजारी के साथ-साथ ट्रस्टी के पद पर दो साल के लिए रहेंगे, जबकि उनके दोनों बेटे आठ-आठ महीने की अवधि के लिए इस पद पर रहेंगे।

5. प्रश्नगत संपत्तियों के संबंध में, यह कहा गया थाः

"नम्बर 1 और 2 पक्ष सी अनुसूची संपत्ति से प्राप्त किराए और आय को धारण करेंगे, अपने पास रखेंगे और उसका आनंद लेंगे।"

6. लक्ष्मणन चेट्टियार ने 24.05.1962 को अपने बेटे चेल्लम के पक्ष में अपना हिस्सा देने के लिए एक वसीयत निष्पादित की। उनकी मृत्यु 10.04.1973 को या उसके आसपास हुई। इसमें कोई विवाद नहीं है कि लक्ष्मणन चेट्टियार की मृत्यु के बाद चेल्लम सोलह महीने की अवधि के लिए पुजारी के साथ-साथ ट्रस्टी के रूप में भी कार्य कर रहे थे और शनमुगम और उनके बेटे आठ महीने की अवधि के लिए उक्त संपत्तियों का प्रबंधन कर रहे थे। 10.02.1980 को चेल्लम की मृत्यु हो गई, जिससे प्रतिवादी संख्या 1 उनके उत्तराधिकारी और कानूनी प्रतिनिधि के रूप में रह गया। शनमुगम ने अपने बेटों के पक्ष में एक वसीयत भी निष्पादित की।

7. उक्त संपत्तियों के संबंध में एक योजना तैयार करने के लिए, अपीलकर्ताओं द्वारा थंगम और अन्य के खिलाफ एक मुकदमा दायर किया गया था, जिसे 1975 के ओ.एस. नंबर 222 के रूप में चिह्नित किया गया था। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश ने अपने फैसले व आदेश दिनांक 19.02.1979 द्वारा उक्त मुकदमे को खारिज कर दिया। इस फैसले के विरुद्ध एक अपील दायर की गई थी, जिसे 1979 के ए.एस. नंबर 661 के रूप में चिह्नित किया गया था, जिस पर हम थोड़ी देर बाद चर्चा करेंगे।

8. हालाँकि, चेल्लम की मृत्यु के बाद शनमुगम के बेटों ने एक मुकदमा दायर किया, जिसे 1982 के ओ.एस. नंबर 83 के रूप में चिह्नित किया गया था, जिसमें अन्य बातों के अलावा यह घोषणा करने की प्रार्थना की गई थी कि प्रतिवादी संख्या 1 यहां चेल्लम उर्फ सुब्बैया का कानूनी उत्तराधिकारी नहीं था। दिनांक 24.05.1962 की उक्त वसीयत की वैधता पर प्रश्नचिह्न लगा दिया गया। विद्वान प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश ने प्रतिवादी संख्या 1 को चेल्लम का पुत्र मानते हुए, लक्ष्मणन चेट्टियार

द्वारा निष्पादित उक्त वसीयत की वैधता को भी बरकरार रखा। दिनांक 13.03.1986 के उक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित और असंतुष्ट होकर अपीलकर्ताओं द्वारा एक अपील दायर की गई, जिसे 1988 के ए.एस. नंबर 1363 के रूप में चिह्नित किया गया। दोनों अपीलों को उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा एक साथ सुना गया। वसीयत को कानून में वैध नहीं मानते हुए उक्त संपत्तियों के प्रबंधन के संबंध में एक योजना बनाने का निर्देश दिया गया। योजना तैयार करने के निर्देश से व्यथित होकर प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा 1991 की संख्या 61 की एक लेटर्स पेटेंट अपील दायर की गई। उन्होंने विद्वान एकल न्यायाधीश के निष्कर्ष के उस हिस्से के खिलाफ एक लेटर्स पेटेंट अपील को भी प्राथमिकता दी कि लक्ष्मणन चेट्टियार द्वारा निष्पादित वसीयत कानून में वैध नहीं थी। प्रतिवादी संख्या 4 ने भी लेटर्स पेटेंट अपील को प्राथमिकता दी, जिसे 1991 के एलपीए संख्या 128 के रूप में चिह्नित किया गया इसमें योजना के निर्धारण **पर** प्रश्नगत किया गया। अपीलकर्ताओं ने एक प्रति-आपत्ति को भी प्राथमिकता दी, जिसे 1995 के प्रति-आपत्ति नंबर 106 के रूप में चिह्नित किया गया, जो इस निष्कर्ष के विपरीत था कि प्रतिवादी संख्या 1 चेल्लम उर्फ सुब्बैया का बेटा था। अपील और प्रति-आपत्ति की सुनवाई एक साथ की गई।

9. खंड पीठ के समक्ष यह स्वीकार किया गया कि विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय के अनुसार बनाई गई योजना संतोषजनक ढंग से काम कर रही थी और इसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी। विद्वान एकल न्यायाधीश का यह निष्कर्ष कि प्रतिवादी संख्या 1 चेल्लम का पुत्र था, भी गम्भीर विवादित नहीं था। हालाँकि, वसीयत की वैधता के संबंध में खंड पीठ ने इसे वैध माना। नतीजतन, यह माना गया कि प्रतिवादी संख्या 1, लक्ष्मणन चेट्टियार की शाखा को आवंटित 24 महीनों में से कुल सोलह महीने की अवधि के लिए प्रकरण के मंदिर और उसकी संपत्तियों के प्रबंधन में रहने का हकदार था।

10. तीन वादी उक्त निर्णय एवं डिक्री से व्यथित एवं असन्तुष्ट होकर हमारे समक्ष हैं। 1995 की प्रति-आपत्ति नंबर 106 की अस्वीकृति या 1979 के ए.एस. नंबर 661 से उत्पन्न लेटर्स पेटेंट अपील को खारिज करने के खिलाफ कोई अपील नहीं की गई है।

11. श्रीमान विद्वान अधिपक्ता वी. प्रभाकर ने अपील के समर्थन में अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित होकर यह प्रस्तुत किया कि:-

(i) संपत्ति के प्रबंधन का अधिकार और पुजारीत्व एक व्यक्तिगत अधिकार होने के कारण, संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 6 (डी) के अर्थ के तहत हस्तांतरणीय नहीं होने के कारण हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है।

(ii) लक्ष्मणन चेट्टियार द्वारा दिनांक 24.05.1962 को निष्पादित कथित वसीयत को कानून में अमान्य माना जाना चाहिए।

(iii) पुजारी और ट्रस्ट का पद धारण करने का अधिकार एक व्यक्तिगत अधिकार है, जो पद धारक की मृत्यु के साथ समाप्त हो जाएगा, जिसके बाद यह उसके उत्तराधिकारियों और कानूनी प्रतिनिधियों को हस्तांतरित हो जाएगा। इस संबंध में, काकीनाडा अन्नदाना समाजम आदि बनाम हिंदू धार्मिक और धर्मार्थ बंदोबस्ती आयुक्त, हैदराबाद और अन्य आदि (1971) 2 एससीजे 527 [1970] 3 एससीसी 359 को दर्शाया गया।

12. दूसरी ओर श्रीमान विद्वान अधिवक्ता केके मणि, प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित जिन्होंने फैसले का समर्थन किया। विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि यह विवाद इस न्यायालय के निर्णय अंगुरबाला मुल्लिक बनाम देबब्रत मुल्लिक (1951) एससीआर 1125 के अंतर्गत आता है।

13. यह निवेदन किया गया कि अपीलकर्ताओं को वसीयत की वैधता या

अन्यथा पर सवाल उठाने से विबंधित किया जाए तथा रोका जाए क्योंकि इसी के समकक्ष शनमुगम के द्वारा भी एक वसीयत निष्पादित की थी। यह इंगित किया गया कि 24.05.1962 को लक्ष्मणन चेट्टियार द्वारा निष्पादित वसीयत को पक्षकारों द्वारा उनकी मृत्यु पर प्रभावी बनाया गया जो 10.04.1973 को हुई थी और यहां अपीलकर्ताओं ने चेल्लम की मृत्यु होने पर इस आधारा पर कि प्रतिवादी संख्या 1 चेल्लम का पुत्र नहीं है, प्रत्यावर्तन के अधिकार का दावा किया।

14. प्रतिवादी संख्या 4 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने पक्ष रखा कि सक्षम न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री के संदर्भ में संपत्तियों का कब्जा नहीं सौंपने के संबंध में पक्षों के बीच विवाद और मतभेद उत्पन्न हुए हैं और मामले को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय उचित निर्देश जारी कर सकता है।

15. प्रश्नगत ट्रस्ट एक निजी ट्रस्ट है। इसलिए, एक निजी ट्रस्ट के रूप में मंदिर के प्रबंधन के नियम और शर्तें ट्रस्ट के संस्थापक की इच्छा के अधीन होंगी। इस संबंध में कोई लिखित दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया। हालाँकि, पक्षकारों ने ट्रस्ट के संस्थापक की इच्छा को इस प्रकार समझा कि पुजारी पद के साथ-साथ एक अवधि के लिए ट्रस्टीशिप का पद भी कानून में स्वीकार्य होगा। विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा 1943 के ओ.एस. संख्या 9 के प्रकरण में ऐसा निर्धारित किया गया था।

16. यह तथ्य कि दोनों शाखाएं दो-दो साल की प्रबंधन अवधि पर सहमत हुई थीं और उक्त प्रकरण में विद्वान अधीनस्थ न्यायाधीश द्वारा पारित डिक्री को लागू किया गया था, इस संबंध में एक बिन्दु है। इसके अलावा, लक्ष्मणन चेट्टियार और उनके दो बेटों ने भी 04.07.1956 को विभाजन का एक विलेख निष्पादित किया। विभाजन के उक्त विलेख में पक्षकारों द्वारा इस बात पर सहमति व्यक्त की गई थी कि उनमें से प्रत्येक आठ महीने की अवधि के लिए पुजारी और ट्रस्टीशिप का पद

संभालेंगे।

17. इसलिए, इस विवाद का निर्धारण उपरोक्त घटनाओं की पृष्ठभूमि में किया जाना चाहिए।

18. हालांकि, इससे पहले कि हम कानूनी विवाद पर ध्यान दें, हम यह ध्यान में रख सकते हैं कि प्रकरण में वादी ने इस आधार पर अनुतोष का दावा किया कि चेल्लम की मृत्यु पर, उसका अधिकार उसमें प्रत्यावर्तन के रूप में निहित हो गया है, यह तर्क देते हुए कि यहां प्रतिवादी संख्या 1 उनका बेटा नहीं था। एक बार जब उक्त कार्यालय में एक विशेष अवधि के लिए, अर्थात दो साल की अवधि में सोलह महीने के लिए प्रत्यावर्तन के अधिकार का दावा किया जाता है, तो चेल्लम में अधिकार के अस्तित्व पर विवाद नहीं किया जा सकता था। कानून में इसे स्वीकार किया हुआ माना जाएगा। जब तक कि पार्टियों द्वारा की गई व्यवस्थाएं और/या लक्ष्मणन चेट्टियार द्वारा निष्पादित उक्त वसीयत के कारण संपत्तियों का हस्तांतरण भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 की धारा 23 के तहत परिकल्पित 'सार्वजनिक नीति' के विपरीत नहीं पाया जाता है, तब तक इसे प्रभावी बनाने में कोई कानूनी बाधा नहीं है, खासकर तब जब यह ट्रस्ट के संस्थापक की इस संबंध में इच्छा पर निर्भर होगा।

19. एक इच्छा को वसीयतनामा दस्तावेज दर्शाता है। इसका अर्थ है अपनी संपत्ति के संबंध में वसीयतकर्ता के आशय की कानूनी घोषणा जिसे वह अपनी मृत्यु के बाद लागू करना चाहता है। यह निष्पादनकर्ता के जीवनकाल के दौरान परिवर्तनशील और निरस्त करने योग्य है।

20. उमा देवी नांबियार और अन्य बनाम टीसी सिधान (मृत), एआईआर (2004) एससी 1772, में यह अभिर्निधारित किया गया था किः-

"10. विल लैटिन शब्द "वॉलंटस" का अनुवाद है, जो एक वसीयतकर्ता

के आशय को व्यक्त करने के लिए रोमन विधि के पाठ में इस्तेमाल किया जाने वाला शब्द था। यह महत्वपूर्ण है कि इस भावात्मक शब्द का अर्थ उस दस्तावेज से है जिसमें आशय निहित है। कई अन्य अंग्रेजी कानून शर्तों के साथ भी यही स्थिति है, यथार्थपूर्ण ने भावात्मक पर अधिकार किया है जैसे कि ओबलिगेशन, बांड, कोन्ट्रेक्ट आदि (विलियमः विल्स और इंटेस्टेट सक्सेसन, पृष्ठ 5)। ''टेस्टामेंट'' शब्द ''टेस्टैटियो मेंटिस'' से लिया गया है, यह मन के दृढ़ संकल्प को प्रमाणित करता है। एक वसीयत को यूलपियंस द्वारा इस प्रकार परिभाषित किया गया है, ''टेस्टामेंटम एस्ट मेंटिस नोस्ट्रे जस्टा कॉन्टेस्टियो इन आईडी सोलेम्निटर फैक्टा टू पोस्टमॉर्टम नोस्ट्रम वैलेट।'' मोडास्टिनस इसे वॉलंटस के माध्यम से परिभाषित करता है ''वॉलंटैटिस नोस्ट्रे जस्टा सेंटेंशिया, डी ईओ क्वॉड क्विस पोस्टमॉर्टम सुम फिएरी वुल्ट (या वेलिट)'' प्रत्येक शब्द ''जस्टा'' का अर्थ है, वैध होने के लिए, वसीयतनामा कानून के रूपों के अनुपालन में बनाया जाना चाहिए। इसका अर्थ है, ''किसी व्यक्ति के आशय की कानूनी घोषणा, जो उसकी मृत्यु के बाद की जाएगी।'' अंतिम इच्छा और वसीयतनामा को ''हमारी इच्छा जो यह दर्शाते हुए कि हमने अपनी मृत्यु के बाद क्या किया होगा'' के रूप में परिभाषित किया गया है। प्रत्येक वसीयत मृत्यु के साथ परिपूर्ण होती है, और जब तक उसकी मृत्यु नहीं हो जाती, वसीयतकर्ता की वसीयत निरंतर रहती है। नम ओम्ने टेस्टामेंटम मोर्टे कंसुमेटम इस्ट; इट वोलुन्टीआ टेस्टामेनटोरिक इस्ट एम्बुलेटरी यूसी ओडी मॉर्टम। (इसलिए, जहां एक वसीयतनामा है, वहां वसीयतकर्ता की मृत्यु भी अनिवार्य है क्योंकि, एक

वसीयतनामा व्यक्तियों के मरने के बाद प्रभावी होता है अन्यथा वसीयतकर्ता के जीवित रहने के दौरान इसका कोई महत्व नहीं होता है।) जर्मन कहते है ''वसीयत'', ''एक उपकरण है जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपनी मृत्यु के बाद प्रभावी होने के लिए अपनी संपत्ति का निस्तारण करता है और जो अपने प्रकृति से जारी रहती है और उसके जीवन के दौरान रद्द करने योग्य है।''

(जर्मन ऑन विल्स, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 11)। वसीयत की इस परिवर्तनशील प्रकृति को अक्सर इसकी प्रमुख विशेषता के रूप में देखा गया है, जो इसे वास्तव में, एक जीवित व्यक्ति के कार्य द्वारा सामान्य प्रकृति से अलग करता है, जो लाभकारी कब्जा वास्तव में स्थगित कर सकता है या यहां तक कि डिस्पोजरर की मृत्यु तक एक निहितार्थ और फिर भी एक अपरिवर्तनीय साधन के तहत इसकी स्पष्ट शर्तों द्वारा ही इस तरह के स्थगन को लागू किया जाएगा और एक लेख कि एक वसीयत अंतिम है, इसे न बदलने वाले समझौते को लागू नहीं किया जाता है (स्कॉलरः लॉ ऑफ विल्स, एस. 326)। इच्छा मनुष्य के वसीयतनामा के आशय का समुच्चय है, जहां तक वे लिखित रूप में होते हैं, कानून के अनुसार विधिवत निष्पादित होते हैं-''

21. एक वसीयतकर्ता अपनी इच्छा से, अपनी संपत्ति का कोई भी निस्तारण इस शर्त के अधीन कर सकता है कि वह कानून के असंगत या राज्य की नीति के विपरीत नहीं होना चाहिए। किसी व्यक्ति की इच्छा उसके वसीयतनामा के आशय का समुच्चय है जहां तक वे लिखित रूप में हैं। यह कोई अंतरण नहीं है, बल्कि दान का एक तरीका है। [बेरूराम और अन्य बनाम शंकर दास और अन्य,- एआईआर (1999) जे और के 55]

22. यह प्रश्न कि क्या शेबेटशिप किसी वसीयत का विषय हो सकता है, अंगुरबाला

मुल्लिक (सुप्रा) में इस न्यायालय की चार-न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष विचार के लिए आया था, जिसमें यह स्पष्ट रूप से अभिर्निधारित किया गया थाः

> "....जैसा कि न्यायिक समिति ने उपरोक्त मामले में देखा, लगभग सभी ऐसे बंदोबस्तों में शेबेट का नवोदित संपत्ति के उपभोग में हिस्सा होता है जो अनुदान की शर्तों या कस्टम या उपयोग पर निर्भर करता है। यहां तक कि जहां शेबेट के कार्यालय से कोई परिलब्धियां नहीं हैं, उसे संपन्न संपत्ति में कुछ प्रकार का अधिकार या हित प्राप्त होता है, जिसमें आंशिक रूप से कम से कम मालिकाना अधिकार का चरित्र होता है। इस प्रकार, शेबैती की अवधारणा में कार्यालय और संपत्ति, कर्तव्यों और व्यक्तिगत हित दोनों तत्वों का मिश्रण और एक साथ होते हैं तथा एक तत्व को दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। यह सारी संपत्ति में व्यक्तिगत या लाभकारी हित की उपस्थिति है जो मालिकाना अधिकारों के चरित्र के साथ स्वामित्व का निवेश करती है और इसे संपत्ति की कानूनी घटनाओं से जोड़ती है"

यह भी अभिर्निधारित किया गया:-

> "21. यह मानते हुए कि 1937 के 18 वें अधिनियम में "संपत्ति" शब्द की व्याख्या उसके समान और सामान्य रूप से स्वीकृत अर्थ में संपत्ति के रूप में की जानी है और इसे किसी विशेष या विशिष्ट प्रकार की संपत्ति तक विस्तारित नहीं किया जाना है, तब भी हम सोचते हैं कि श्री टेक चंद का अन्य तर्क बिल्कुल सही है। शेबेटशिप का उत्तराधिकार, भले ही इसमें कार्यालय का एक घटक हो, सामान्य या धर्मनिरपेक्ष संपत्ति के उत्तराधिकार का अनुसरण करता है। यह

उत्तराधिकार का सामान्य नियम है जो शेबेटशिप के उत्तराधिकार को भी नियंत्रित करता है। जबकि सामान्य कानून अब 1937 के 18 वें अधिनियम के कारण बदल दिया गया है, ऐसा कोई ठोस कारण प्रतीत नहीं होता है कि वर्तमान में जो कानून है उसे शेबेटशिप के हस्तांतरण के मामले में लागू नहीं किया जाना चाहिए।''

23. उसमें दिए गए सिद्धांत पर नारायणम सेशाचार्युलु और अन्य बनाम नारायणम वेंकटाचार्युलु एआईआर 1957 एपी 876, मामले में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा कुछ तथ्यों पर विचार किया गया था, लेकिन इसके तथ्यों में इसका विवेचन करना आवश्यक नहीं है।

24. शंभु चरण शुक्ला बनाम श्री ठाकुर लाडली राधा चंद्र मदन गोपालजी महाराज और अन्य 5 (1985) 2 एससीसी 524, में इस न्यायालय ने कहाः-

''15. हिंदू विधि और इस न्यायालय के उपरोक्त दो निर्णय तथा अंगुरबाला मुल्लिक केस 2 में पहले के निर्णय से पता चलता है कि शेबेटशिप अंतिम पुरुष धारक की विधवा द्वारा विरासत में मिली अचल संपत्ति की प्रकृति में है, जब तक कि इसका कोई उपयोग या रिवाज न हो। उन मामलों में अलग स्थिति है जहां संस्थापक ने उसके द्वारा बनाई गई बंदोबस्ती में शेबैती अधिकार का निस्तारण नहीं किया है। वर्तमान मामले में पुरूषोत्तम लाल ने अपनी वसीयत में शेबैती अधिकार के संबंध में कोई व्यवस्था नहीं की है, प्रदर्श ए-2 दिनांक 14 अप्रैल, 1944 जिससे उन्होंने बंदोबस्ती बनाई। इसके विपरीत किसी रीति-रिवाज या उपयोग का अभिवचन नहीं किया गया है। इसलिए, विधवा अशर्फी देवी एक सीमित मालिक के रूप में उनकी

मृत्यु के बाद उनके द्वारा रखे गए शेबैती अधिकार में सफल रही और वह अधिकार हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14(1) के प्रावधानों द्वारा एक पूर्ण अधिकार में विस्तारित हो गया और उस अधिकार को वसीयत द्वारा उस व्यक्ति के पक्ष में हस्तांतरित कर सकती है जो गैर-हिंदू नहीं है और जो शेबेट के कर्तव्यों का पालन स्वयं या किसी अन्य उपयुक्त व्यक्ति द्वारा करा सकता है। इन परिस्थितियों में मेरा मानना है कि दूसरे प्रतिवादी ने वसीयत प्रदर्श ए-6 के तहत शेबैती का अधिकार हासिल कर लिया जो अशर्फी देवी द्वारा 7 मार्च 1963 को उनकी मृत्यु के समय निष्पादित किया गया। इस अपील में उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। तदनुसार अपील खर्चे सहित खारिज की जाती है।"

25. सब्यसाची मुखर्जी, जे. ने अपने सहमति वाले फैसले में कानून को इस प्रकार बतायाः-

"....मेरी राय में यह प्राधिकारीयों द्वारा अच्छी तरह से तय किया गया है कि शेबेटशिप एक संपत्ति है जो विरासत में मिली है। शेबैत के कार्यालय का हस्तांतरण विलेख या वसीयत या बंदोबस्ती या उस अधिनियम की शर्तों पर निर्भर करता है जिसके द्वारा देवता को स्थापित किया गया था और संपत्ति को पवित्र किया गया था या देवता को दिया गया था, जहां बंदोबस्ती या बंदोबस्ती में कोई प्रावधान नहीं है उत्तराधिकार के संबंध में संस्थापक द्वारा बनाया गया विलेख या वसीयत द्वारा और जहां विलेख या वसीयत या बंदोबस्ती में उत्तराधिकार का तरीका समाप्त हो जाता है, वहां संपत्ति का शीर्षक या

संपत्ति का प्रबंधन और नियंत्रण, जैसा भी मामला हो, हिंदू विधि के अनुसार विरासत के सामान्य नियमों का पालन करता है।''

26. रणबीर दास और अन्य आदि बनाम कल्याण दास और अन्य (1997) 4 एससीसी 102, में इस न्यायालय ने विधि को इस प्रकार बतायाः-

''....सामान्य अर्थ में वसीयत, वसीयतकर्ता की मृत्यु के बाद प्रभावी होती है लेकिन शेबैत के नामांकन के मामले में, नामांकन इसके निष्पादन की तारीख से प्रभावी होता है, हालांकि इसे वसीयत के रूप में तैयार किया जाता है। एक बार जब यह प्रभावी हो जाता है, तो नामांकित व्यक्ति हरिदास के अंतिम चेले के निधन के बाद शेबेट के रूप में कार्यालय में जाने का हकदार हो जाता है। इन परिस्थितियों में एक संपत्ति होने के नाते, शेबेटशिप रामबीर दास में निहित है और वह संपत्ति का प्रबंधन कर सकते हैं तथा आध्यात्मिक और अन्य उद्देश्यों के लिए मंदिर का प्रबंधन कर सकते हैं, जिसके साथ मूल संस्थापक हरिदास ने भगवान कृष्ण और राधा को संपत्ति प्रदान की थी।''

27. हम देख सकते हैं कि डॉ. बीके मुखर्जी ने द हिंदू लॉ ऑफ रिलिजियस एंड चैरिटेबल ट्रस्ट पर अपने टैगोर लॉ लेक्चर में अन्य बातों के साथ-साथ यह कहा थाः-

''5.30. शेबिट को अपने उत्तराधिकारी को नामांकित करने का अधिकार।- बंदोबस्ती का संस्थापक हमेशा अपने द्वारा नियुक्त शेबिट को अपने उत्तराधिकारी को नामांकित करने का अधिकार प्रदान कर सकता है। स्पष्ट रूप से दिए गए ऐसे अधिकार के बिना, कोई भी शेबैत अपने कार्यालय में अपने उत्तराधिकारी को नियुक्त नहीं कर सकता है। नामांकन की शक्ति का प्रयोग शेबैत द्वारा अपने

जीवनकाल के दौरान या वसीयत द्वारा किया जा सकता है, लेकिन वह इस शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित नहीं कर सकता है।"

28. उपर्युक्त घटनाओं की पृष्ठभूमि में, हम श्री प्रभाकर द्वारा भरोसा किए गए निर्णयों का परीक्षण कर सकते हैं।

29. काकीनाडा अन्नदाना समाजम (सुप्रा) में, यह न्यायालय का संदर्भ इस पर सवाल था कि क्या भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) के अर्थ के भीतर शेबेटशिप के अधिकार को मौलिक अधिकार माना जा सकता है, जैसा कि तब था, और परिणामस्वरूप 1966 के आंध्र प्रदेश धर्मार्थ और हिंदू धार्मिक बंदोबस्ती अधिनियम (17) के प्रावधान उसके खंड (5) के अर्थ में एक कानून होंगे। यह माना गया कि ट्रस्टीशिप और पुजारीशिप एक संपत्ति होगी, लेकिन भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) के अर्थ के तहत संपत्ति नहीं होगी।

30. काली किंकर गांगुली बनाम पन्ना बनर्जी और अन्य [1974] 2 एससीसी 563, में हालांकि इस न्यायालय की खण्डपीठ ने राय दी कि 'वसीयत द्वारा शेबेट के हस्तांतरण की अनुमति नहीं है क्योंकि शेबेट के आधार पर जो कुछ भी है वह उससे आगे नहीं जा सकता है क्योंकि वसीयत केवल उसकी मृत्यु पर ही लागू होती है लेकिन यह सवाल कि क्या वसीयत हस्तांतरण होगी या नहीं, उस पर विचार नहीं किया गया। विचार के लिए यह प्रश्न उठा कि क्या शेबेटशिप, मंदिर और उसमें स्थापित देवता का अधिकार हस्तांतरणीय है। उक्त विवाद का निस्तारण करते समय इस न्यायालय ने पाया किः-

"14. हिंदू लॉ ऑफ रिलिजियस एंड चैरिटेबल ट्रस्ट, प्रथम संस्करण में, डॉ. बीके मुखर्जी द्वारा दिए गए टैगोर लॉ व्याख्यान में पेज सं.

228 में कानून का विवरण दिया गया हैः-

"हालांकि शेबैती अधिकार किसी भी अन्य संपत्ति की तरह विरासत योग्य है, इसमें मालिकाना अधिकार के अन्य सम्पति संबंधि अधिकार का अभाव है। उस व्यक्ति द्वारा स्वतंत्र रूप से हस्तांतरित करने की क्षमता है जिसमें यह निहित है। इसका कारण यह है कि शेबेट से जो व्यक्तिगत मालिकाना हित मिला है, वह देवता के सेवक और उसकी अस्थायीताओं के प्रबंधक के रूप में उसके कर्तव्यों से सहायक और अविभाज्य है। चूंकि व्यक्तिगत हित को कर्तव्यों से अलग नहीं किया जा सकता है, इसलिए शेबेटशिप के हस्तांतरण का मतलब हस्तांतरणकर्ता के कर्तव्यों का एक प्रतिनिधिमंडल होगा जो न केवल संस्थापक के व्यक्त इरादों के विपरीत होगा बल्कि कानून की नीति का उल्लंघन होगा। शेबैतशिप के हस्तांतरण या किसी धार्मिक कार्यालय के मामले को हिंदू अधिवक्ताओं द्वारा कहीं भी स्वीकार नहीं किया गया है।"

31. हालाँकि, एक बार फिर न्यायालय ने पाया कि कुछ परिस्थितियों के कारण अलगाव के खिलाफ अधिकार में छूट दी गई है, यह कहते हुएः-

"17. कुछ विशेष परिस्थितियों के कारण शेबैती अधिकार के हस्तांतरण के विरुद्ध नियम में छूट दी गई है। इनका वर्गीकरण डॉ. बी.के. मुखर्जी द्वारा धार्मिक और धर्मार्थ ट्रस्ट के हिंदू विधि पर उनके टैगोर लॉ व्याख्यान, प्रथम संस्करण में पृष्ठ सं. 231 पर किया गया है। तीन शीर्षों के अंतर्गत पहला मामला यह है कि जहां स्थानांतरण किसी आर्थिक लाभ के लिए नहीं है और अंतरिती, अंतरणकर्ता का

अगला उत्तराधिकारी है या शेबैट्स के उत्तराधिकार की पंक्ति में खड़ा है और कर्तव्यों के पालन के संबंध में किसी अयोग्यता से ग्रस्त नहीं है। दूसरा, जब स्थानांतरण देवता के हित में और किसी जरूरी आवश्यकता को पूरा करने के लिए किया जाता है। तीसरा, जब खरीदारों के एक सीमित दायरे के भीतर शेबैती के अलगाव को मंजूरी देने वाला एक वैध रिवाज साबित हो जाता है, जो देवता के वास्तविक या संभावित शेबैत हैं या अन्यथा परिवार से जुड़े हुए हैं।''

32. राजेश्वर बनाम गोपेश्वर में कलकत्ता उच्च न्यायालय [(1908) 35 सीएएल. 226] यह मत है कि वसीयत द्वारा उत्तराधिकारी का नामांकन उसी को उचित ठहराने वाले उपयोग के तहत स्वीकार्य हो सकता है। (सोवाबती दासी बनाम काशी नाथ एआईआर 1972 सीएएल 95) में उच्च न्यायालय द्वारा कुछ अलग दृष्टिकोण अपनाया गया था । हालाँकि, बॉम्बे हाई कोर्ट ने एक अलग दृष्टिकोण अपनायाः- देखें-[मंचराम बनाम प्राणशंकर (1882) 6 बॉम्बे 298]

33. हालाँकि, हमें उक्त प्रश्न में जाने करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि (श्याम सुंदर बनाम मोनी मोहन एआईआर 1976 एससी 977), में इस न्यायालय के फैसले को देखते हुए विधि अब अच्छी तरह से तय हो गयी है (नंदलाल बनाम केशरलाल एआईआर 1975 राज. 226) भी देखें।

34. इस तरह का नामांकन अंतःविषय होने पर भी स्वीकार्य है। इस न्यायालय के निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, हमारी राय है कि हमारे लिए मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय पर विचार करना आवश्यक नहीं है, जिस पर श्री प्रभाकर ने गहरा भरोसा जताया है, क्योंकि उक्त निर्णय किस प्रश्न के इर्द-गिर्द घूमता है कि ऐसा अधिकार अंतरणीय है या नहीं। हमारी राय में एक वसीयत अंतरणीय नहीं है, इस पर संपत्ति

हस्तांतरण अधिनियम की धारा 6 (डी) में निहित रोक है इसलिए, हम उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निष्कर्षों से सहमत हैं कि वसीयत कानून में वैध है।

35. इसके अलावा, मंदिर को चलाने के उद्देश्य से प्रबंधन की एक निश्चित अवधि की आवश्यकता को परिवार द्वारा लंबे समय से स्वीकार किया गया है। यदि इसे अन्यथा अभिर्निधारित किया जाना है, तो न्यायालय को सक्षम न्यायालय द्वारा पारित एक बाध्यकारी डिक्री में भी हस्तक्षेप करना होगा, जो 1944 में जारी की गई और जो पक्षकारों पर बाध्यकारी है। यहां अपीलकर्ताओं के आचरण की स्थिति प्रासंगिक हो जाती है। उन्होंने न केवल शनमुगम की शाखा का अधिकार स्वीकार किया बल्कि चेल्लम का अधिकार भी स्वीकार किया। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि चेल्लम लंबे समय से दो साल की अवधि में सोलह महीने की अवधि के लिए शेबेटशिप के अधिकार का प्रयोग कर रहा था। एक बार जब नीचे के न्यायालयों का यह निष्कर्ष आ गया कि प्रतिवादी संख्या 1 उसका बेटा है, तो उसके उत्तराधिकार का अधिकार विवादित नहीं है इसलिए हमारी राय में, इस अपील में उठाए गए तर्कों को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

36. इसलिए, हम उच्च न्यायालय की खंडपीठ के निष्कर्षों की पुष्टि करते हैं। हालाँकि, यह प्रश्न अभी भी विचाराधीन है कि क्या इस न्यायालय को पक्षकारों को उनकी अवधि समाप्त होने पर कब्जा सौंपने का निर्देश देने वाला कोई आदेश पारित करना चाहिए। कानून में निस्संदेह वे भी ऐसा ही करने के लिए बाध्य हैं। वे न्यायालय द्वारा निर्देशित अवधि से अधिक पद पर नहीं रह सकते। उनकी शर्तें तय करनी होंगी हम देख सकते हैं कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष, पक्ष निम्नलिखित पर सहमत हुएः-

"ए) रामलिंगम (यहां आवेदक) द्वारा प्रतिनिधित्व की गई शाखा दो

साल की अवधि के लिए मंदिर और उसकी संपत्तियों का प्रबंधन और प्रशासन करेगी।

बी) जहां तक दूसरी शाखा की बात है, जिसमें एक तरफ पहला प्रतिवादी और दूसरी तरफ उत्तरदाता संख्या 2 से 4 शामिल हैं, वे 2 साल की अवधि के लिए मंदिर का प्रबंधन और प्रशासन करेंगे, यानी प्रत्येक एक के लिए।''

37. इस न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 4 द्वारा शुरू की गई अवमानना कार्यवाही में, जिसे 2004 की अवमानना याचिका संख्या 550 के रूप में चिह्नित किया गया था, निर्देश दिया:-

''अवमानना याचिका में लगाए गए आरोपों और प्रत्यारोपों पर जाए बिना, हम प्रतिवादी संख्या 1 को निर्देश देते हैं कि वह 11 दिसंबर, 2004 को सुबह 11.00 बजे बेलीफ की उपस्थिति में आवेदक को मंदिर का कब्जा सौंप दे। प्रधान अधीनस्थ न्यायाधीश, मदुरै का न्यायालय जो मंदिर में चल वस्तुओं की सूची लेगी और उस पर आवेदक के साथ-साथ अपील में प्रथम प्रतिवादी द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे। पहला प्रतिवादी भी आज से चार सप्ताह के भीतर 10,000/- रुपये की राशि जमा करायेगा। उक्त राशि को मंदिर के नाम पर सावधि जमा में रखा जाएगा और प्रबंध ट्रस्टी उस पर केवल ब्याज निकालने का हकदार होगा। इस संबंध में अनुपालना इस न्यायालय को जनवरी, 2005 के प्रथम सप्ताह में सूचित किया जाएगा।''

38. इस न्यायालय द्वारा समय-समय पर कई आदेश पारित किये गये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसे निर्देशों के बावजूद कोई न कोई पक्ष कार्यकाल समाप्त होने के

बावजूद पद पर बने रहने का दावा करता है। इस अपील में जैसा कि श्री प्रभाकर ने सुझाव दिया है, कब्जा लेने या सौंपने के लिए कोई समय तय करना हमारे लिए व्यावहारिक नहीं हो सकता है। हालाँकि, ऐसा प्रतीत होता है कि निष्पादन का एक अलग मामला अधीनस्थ न्यायाधीश, मदुरै के समक्ष लंबित है।

39. इसलिए, हम अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, विद्वान विचारण न्यायाधीश को इस संबंध में उचित आदेश पारित करने का निर्देश देते हैं। विद्वान विचारण न्यायाधीश उक्त आदेश दिनांक 07.12.2004 या किसी अन्य आदेश के अनुसार प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा जमा की गई राशि के संबंध में एक उचित आदेश पारित कर सकता है जिसे उसके ज्ञान में लाया जा सकता है।

40. यह अपील उपरोक्त निर्देशों के साथ प्रतिवादी नंबर 1 के पक्ष में अपीलकर्ता द्वारा देय खर्चे के साथ खारिज की जाती है। वकील की फीस 50,000/- रुपये आंकी गई है।

वी.एस.एस.

अपील खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी कन्हैयालाल पारीक (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।